भाव एवं रस की दृष्टि से ध्वनि सिद्धान्तो का चित्रपट संगीत पर प्रभाव

योगेश कुमार
शोधार्थी (पीएच०डी०), यू०जी०सी० नेट संगीत विभाग
महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक।

भूमिका :–

संगीत शब्द की उत्पत्ति 'गीत' शब्द में 'सम' उपसर्ग लगाने से हुई है। 'सम' का अर्थ है – सुचारू रूप से अथवा सही ढ़ंग से और 'गीत' शब्द का अर्थ 'गाने से है', 'सम्यक्प्रकारेण यद्गीयते तत्संगीतम्।' अर्थात् जो सभी प्रकार से अथवा सुचारू रूप से गाया जाए, वह संगीत है। भारतीय सांगीतिक परम्परा के मनिषियों के अनुसार संगीत में तीन कलाओं का समावेश माना गया है। यथा–''गीतम् वाद्यं च नृत्यम् त्रय संगीतमुच्यते।'' अर्थात गायन, वादन और नृत्य के समूह को संगीत कहते है। संगीत वह कलात्मक विद्या है, जिसमें गीत, वाद्य तथा नृत्य का लयात्मक समन्वय दृष्टिगोचर होता है।

भारतीय विचारधारा के अनुसार भगवान ब्रह्मा ने सामवेद से संगीत की सृष्टि की है। पृथ्वी से पहले सारा प्रपञ्च आकाश रूप में स्थित था और इस आकाश में केवल नाद (Musical Sound) ही व्याप्त था। आकाश से पंच भूतों का उद्भव हुआ। तत्पश्चात् उन्ही से सभी जीव तथा देवता आदि उत्पन्न हुए। अतः दुनिया की समस्त वस्तुओं का आधार नाद ही है। संगीत मनुष्य की संवेदनाओं, भावनाओं एवं विचारों की अभिव्यक्ति का नाद्मय साधन है। विभिन्न भावों को अभिव्यक्त करने वाली ये रंजक ध्वनियाँ ही संगीत के स्वरों की जननी है। ये विशिष्ट ध्वनियाँ ही संगीत में प्रयुक्त होकर स्वरों का रूप धारण करती हैं और स्वर ही संगीत का मूलाधार है।

भाव :– 'भाव' का सर्वप्रथम विवेचन 'भरत' ने ही किया है तथा इसकी 'नाट्यशास्त्र' के सातवें अध्याय में व्याख्या की गई है। भाव का अर्थ है जो

विभावों द्वारा निष्पन्न होता है और वाचिक, आंगिक तथा सात्विक भावों के अभिनय से युक्त होता है।

संगीत विद्वानों ने 'भाव' के तीन मुख्य भेदों की चर्चा की है स्थायी भाव, अनुभाव एवं सचारी भाव।

स्थायी भाव :–

''यथा नराणं नृपतिः शिष्याणां च यथा गुरूः।

एवं हि सर्वभावाना भावः स्थायी महानिह।।''

जिस प्रकार मनुष्यों में 'राजा' तथा शिष्यों में 'गुरू' मुख्य होते हैं, उसी प्रकार सब भावों में 'स्थायी–भाव' मुख्य माना गया है। भरतानुसार ''अनेक समवेत् रसों में जिस एक 'रस' का स्वरूप मुख्य रहता है, वह 'स्थायी–भाव' है बाकी सभी 'संचारी–भाव' होते हैं।''

अनुभाव :–

''वागङ्गााभिनयेनेह यतस्त्वर्थो अनुभावयते।

भााखाङ्गोपाङ्गसयुक्तस्त्वनुभावस्ततः स्मृतः।।''

भरत ने 'अनुभाव' की व्याख्या इस प्रकार की है– जिन वाचिक, आंगिक अभिनयों द्वारा दर्शकों को अर्थ की अनुभूति अर्थात ज्ञान हो, वह 'अनुभाव' कहलाता है। भरतानुसार 'अनुभव' तीन प्रकार का होता है। वाचिक, आंगिक एवं सात्विक।

(क) वाचिक :– यह वाणी से सम्बन्धित चेष्टाएँ होती है।

(ख) आंगिक :– यह भारीर के विभिन्न अंगो से सम्बन्धित चेष्टाएँ होती है।

(ग) सात्विक :– यह आंसू एवं रोमांच द्वारा होने वाली चेष्टाएँ होती है।

सचारी (व्यभिचारी) भाव :–

''नाट्यशास्त्र'' के व्याख्याकार श्री बाबू लालशुक्ल 'शास्त्री' ने संचारी–भावों अर्थात् व्याभिचारी – भावों के विषय में 'भरत' के कथन का उल्लेख करते हुए लिखा है कि–

''विशेषात् आभि मुख्येन चरन्तीति व्यभिचारिणैः।''

इन्हे व्यभिचारी भाव इसलिए कहते है, क्योंकि ये विविध स्वरूपों या विषयों की ओर अभिमुख रसों के सम्बन्ध में या रसों में संचार करते हैं।

अर्थात् यह विविध अनुभावों के अभिनय के द्वारा 'भाव' को रसोद्‌बोध तक पहुँचा देते है। आचार्य बृहस्पति के अनुसार ''अस्थायी रूप से व्यक्त होने वाले भाव सचारी–भाव कहलाते है तथा ये अनेकों स्थायी भावों के उद्‌बोध के समय प्रकट होते है, इसी व्यभिचार के कारण इन्हे व्यभिचार कहते हैं।''

चित्रपट :–

भारतीय चित्रपट के इतिहास को हम दो भागों में विभाजित कर सकते है। प्रथम भाग में उन चित्रपटों को लिया जा सकता है जो मूक थे, जिनमें ध्वनि वार्तालाप आदि की कोई व्यवस्था नही थी। दूसरे भाग में सवॉक चित्रपटों को लिया जा सकता है। इन चित्रपटों में तकनीकी संसाधनों से ध्वनि संप्रेषित की गई थी। चित्रपट में गीत, संगीत, संवाद आदि का प्रचलन इन्ही साधनों के माध्यम से हुआ।

मूक चित्रपट :–

यह चित्रपट 3 मई, 1913 को बम्बई में सैन्ड हर्स्ट रोड़ पर स्थित कोरोनेशन में प्रदर्शित किया गया था। राजा हरिश्चन्द्र को प्रथम हिन्दी चित्रपट माना गया है। मराठी भाषी होते हुए भी दादा साहब ने महात्मा गांधी जी की भांति ही हिन्दी भाषा के राष्ट्र व्यापी स्वरूप को पहचान लिया तथा उसी को आपने प्रथम चित्रपट को समझाने का माध्यम् स्वीकार किया। इस चित्रपट के निर्माण की पूरी रील आज भी 'राष्ट्रीय फिल्म संग्रहालय' पूना में उपलब्ध है, जिसमें दादा साहब को निर्देशन करते दिखाया गया है। चित्रपट के इस युग में अधिकतर चित्रपट पौराणिक कथाओं पर आधारित होते थे। 1913 से 1930 तक बने मूक चित्रपटों का लेखा–जोखा इस प्रकार है –1913 राजा हरिश्चन्द्र, भस्मासुर मोहिनी 1914 सत्यवान–सावित्री 1915 लंकादहन, प्रहलाद चरित्र, कृष्ण जन्म आदि 1918–1920 दाताकर्ण, कालिया मर्दन, विश्वामित्र मेनका, श्री राम जन्म आदिस्वाक चित्रपट :–

विश्व में मुख्यतः भारत ही एक ऐसा देश है, जिसमें संगीत के कारण चित्रपट प्रसिद्धि प्राप्त करते हैं एवं भारतवर्ष में संगीत से ही चित्रपट पहचाने जाते है। उनकी अधिकांश लोकप्रियता चित्रपट के गीतों पर निर्भर करती है। प्रारम्भिक काल में चित्रपट संगीत का प्रेरणा स्त्रोत नाटक थे।

सवॉक युग से तात्पर्य उस समय से है, जब भारतीय चित्रपट में संगीत का समावेश हुआ। तीस के दशक में सवॉक चित्रपटों का आरम्भ एक

आश्चर्यजनक घटना थी, भारत मे 14 मार्च, 1931 का दिन लोगों के लिए अपार कौतुहल और आश्चर्य का दिन था। इम्पीरियल चित्रपट कंपनी द्वारा पहले बोलते चित्रपट 'आलमआरा' का प्रदर्शन इसी दिन बम्बई के 'मैजेस्टिक सिनेमा' में हुआ। इसके निर्माता व निर्देशक खान बहादुर आर्देशीर एम० ईरानी थे। चित्रपट के रूप में प्रदर्शित होने से पहले 'आलमआरा' रंगमंच का एक चर्चित नाटक था। इस चित्रपट के अभिनेताओं का नाम मास्टर विट्ठल, जुबैदा, जिल्लोबाई, पृथ्वीराज कपूर तथा जगदीश सेठी थे। चित्रपट में अधिक वाद्ययन्त्रों का प्रयोग भी नही हुआ करता था और कलाकारों को माईक के सामने खड़ा होकर गाना पड़ता था। इस चित्रपट में हार्मोनियम, तबला तथा वायलिन का प्रयोग किया गया था। इसमें करीब एक दर्जन गीतों का समावेश किया गया था। जिसमें एक–दो गीत बहुत लोकप्रिय हुए। जुबैदा का गाया 'बदला दिला या रब तू सितमगरों से' और ड़ब्ल्यू०एम० खान का गाया गीत 'दे दे खुदा के नाम पर' बहुत लोकप्रिय हुआ कि इसका एक–एक टिकट पचास–पचास रूपये ब्लैक में बिका था।

सवॉक चित्रपटों के आगमन के साथ ही चित्रपटों में गीतों का प्रचलन शुरू हुआ। उन दिनों सुरेन्द्र, के०एल० सहगल, रामानन्द पंडित, गौहरबाई तथा राजकुमारी आदि ऐसे कलाकार थे जो अभिनय के साथ–साथ गीत भी गा सकते थे।

रस का अभिप्राय एवं निष्पत्ति :–

सामान्यतः 'रस' शब्द का चार अर्थो में प्रयोग होता है जो निम्नलिखित है–

1. प्राकृतिक–रस (पदार्थ–रस)
2. आयुर्वेदिक–रस
3. साहित्य–रस
4. मोक्ष या भक्ति–रस

उपरोक्त रस–भेदों में से 'प्राकृतिक रस' से अभिप्राय ऐसे रस से है जो किसी पदार्थ आदि को निचोड़कर निकाला गया द्रव होता है, जिसमें किसी न किसी प्रकार का स्वाद होता है। 'रस' शब्द का प्रयोग पदार्थ–सार और अस्वाद दोनो अर्थो में होता है। आयुर्वेदिक–रस से अभिप्राय विभिन्न औषधियों आदि से लिया जा सकता है तथा यह एक तरह से प्राकृतिक–रस अर्थात् पदार्थ–रस का ही पर्याय है।

साहित्य–रस का अभिप्राय काव्य–सौन्दर्य, काव्यस्वाद से लिया जा सकता है।

इसी प्रकार मोक्ष (भक्ति) रस जिसे 'आत्म–रस' भी कहा जा सकता है, ब्रह्मानन्द या आत्मानन्द का परिचायक है।

भरतकृत 'नाट्यशास्त्र' के छठे और सातवें अध्याय में रस–सिद्धान्त इस प्रकार मिलता है, जब मुनि लोगों ने 'भरत' से 'रस' के विषय में प्रश्न किया कि 'रस क्या पदार्थ है ?' तो भरत का उत्तर था 'आस्वाद्यमानत्वात्' अर्थात 'रस अस्वाद्य पदार्थ है' लेकिन जब मुनि लोगों ने फिर से अगला प्रश्न किया कि 'रस' का आस्वादन कैसे किया जाए ? 'भरत' का प्रतियुत्तर था – ''जिस प्रकार अनेक प्रकार के व्यंजन से संस्कारित अन्न का ग्रहण प्रसन्नचित पुरूषों द्वारा किया जाता है और 'रस' का आस्वादन किया जाता है तथा जिसके परिणामस्वरूप हर्ष का अनुभव होता है, उसी प्रकार विविध भावों तथा वाचिक, आंगिक तथा सात्विक अभिनयों से युक्त स्थायी भावों का आस्वादन सहृदय प्रेक्षक द्वारा किया जाता है तथा हर्ष का अनुभव किया जाता है। अतः नाट्य के माध्यम से आस्वादित होने के कारण इसे 'नाट्य–रस' कहा गया है।''

'रस' के विषय में 'भरत–मुनि' का एक अन्यमत यह है कि – ''जिस प्रकार व्यंजन, औषधि एवं द्रव्य के संयोग से 'रस' बनता है, उसी प्रकार तीन प्रकार के भावों; (विभाव, अनुभाव एवं संचारी) द्वारा विभिन्न प्रकार के भाव उन्पन्न होते है।''

रस–निष्पत्ति एवं संयोग के विषय में 'भरत' के परवर्ती आचार्यों में परस्पर मतभेद भी उत्पन्न हुए जिनमें से चार मत मुख्य हैं–

1. भट्ट लौल्लट का उत्पत्तिवाद,
2. आचार्य शंकुक का अनुकृतिवाद (अनुमितिवाद),
3. भट्ट नायक का मुक्तिवाद,
4. अभिनव गुप्त का अभिव्यक्तिवाद।

ध्वनि एवं सिद्धान्त :–

ध्वनि बोध के लिए उत्पादक यन्त्र, माध्यम और ग्राहक (Receiver)

तीनों तत्वों का होना अनिवार्य है। ध्वनि की उत्पत्ति के लिए किसी द्रव्य का होना आवश्यक होता है, बिना द्रव्य के हम जिस ध्वनि का अनुभव करते हैं, उसको संगीत में अनाहत नाद कहते है। यह संगीत के उपयोग का नहीं है। संगीतोपयोगी नाद आहत नाद ही हो सकता है, जो किसी द्रव्य की ध्वनि पर ही निर्भर करता है। ध्वनि उत्पादक यन्त्र से उत्पन्न होकर किसी भौतिक माध्यम के द्वारा ध्वनि 'ग्राहक' के कानों तक पहुंचती है और मानव के ज्ञानतन्तुओं में स्पन्दन उत्पन्न करती है, तब मस्तिष्क इसका अनुभव करता है। यह प्रक्रिया ध्वनि को ग्राहकता के लिए अत्यावश्यक है। इनमें से किसी एक के अभाव में भी हम ध्वनि को ग्रहण नहीं कर सकते। कंपन की लगातार और नियमित आवृति से ही नाद उत्पन्न होता है। जिस ध्वनि के कम्पन्न नियमित होते हैं, वह ध्वनि संगीतोपयोगी नहीं होती उसको 'रव'(Noise) कहा जाता है। रव को साधारण भाषा में 'शोर' भी कह सकते हैं।

मानव शरीर मे ध्वनि उत्पादक तत्त्व को विज्ञान में 'Larynx' कहते हैं। पाश्चात्य संगीत में ध्वनि सम्बन्धी शास्त्र का अध्ययन सर्वप्रथम 'पायथागोरस' ने 500 ई० पू० में आरम्भ किया था। ध्वनि को भली–भान्ति समझने के लिए उसके उत्पत्ति स्थल से कर्णेन्द्रियों तक पहुंचने मे 1/13 सेकेण्ड का समय लगता है 128 आंदोलन संख्या वाली ध्वनि को 0.9 सेकेण्ड, 256 आंदोलन वाली ध्वनि को 0.7 सेकेण्ड और 384 सेकेण्ड आंदोलन वाल ध्वनि का 0.4 सेकेण्ड का समय लगता है। सही अर्थो में 16 से 38,000 कम्पन्न संख्या वाली ध्वनि को मनुष्य सुन सकता है। इसके ऊपर और नीचे की ध्वनियों को मानव के कान ग्रहण करने मे सक्षम नही हैं। इसी प्रकार संगीत में प्रयुक्त होने वाली ध्वनि की भी विशिष्ट सीमा होती है। सांगीतिक स्वर कम से कम 40 तथा अधिक से अधिक 4,000 कम्पन्न संख्या के होने चाहिए तभी इनको सांगीतिक ध्वनि के रूप में सुना जा सकता है।

पं० भातखण्डे के अनुसार श्रुतियों को उनकी प्रकृति के आधार पर चार भागों में विभाजित किया गया है – उच्च तथा रूक्ष ध्वनि को वातज, मधुर तथा सुकुमार ध्वनि को पितज, गम्भीर तथा घन्नशील ध्वनि को कफज और चौथे भाग मे सभी के मेल को सन्निपात कहते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. डॉ० ललित कुमार कौशल, हिन्दुस्तानी भाास्त्रीय संगीत में वाद्यात्मक रस–भावाभिव्यक्ति, कनिष्क पब्लिशर्स, डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2012
2. सीमा जौहरी, संगीतायन, राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2003
3. डॉ० रीना कुमार, हिन्दुस्तानी संगीत का अवलोकन, कनिश्क पब्लिशर्स, डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2008
4. डॉ० शुभा श्रीवास्तव, उत्तर भारतीय तालों में छन्द, रस और सौन्दर्यतत्त्व, कनिश्क पब्लिशर्स, डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2013
5. डॉ० लावण्य कीर्ति सिंह 'काया', संगीत–सुधा, कनिश्क पब्लिशर्स, डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2009
6. उमेश जोशी, भारतीय संगीत का इतिहास, कल्पना प्रकाशन, दिल्ली संस्करण, 2018
7. डॉ० नीता मिश्रा, संगीत में नादरूप व ध्वनिपक्ष के विभिन्न आयाम, निर्मल पब्लिकेशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण, 1996